अष्टांग योग साधना व संगीत

डॉ मधु शर्मा

सहायक प्राध्यापिका, संगीत (कंठ) सनातन धर्म महाविद्यालय, अम्बाला कैंट ।

सारांश-

योग व संगीत, मनको संयम और अनुशासित करता है।संगीत में श्वास नियन्त्रण व अंग संचालन का बहुत महत्व होता है। नादयोग, संगीतज्ञों की योग क्रिया है।ओंकार साधना के लिए नाभि से स्वर निकालना कपालभाती की भांति योग क्रिया ही है। योग का ध्येय एकाग्रता सिध्द करना है।संगीत के द्वारा भी यही एकाग्रता प्राप्त की जाती है। स्बरों की उपासना, रियाज शास्त्र शुद्ध पद्धति द्वारा बाद ब्रह्म की अराधना कर अन्त:करण में गहराई तक उतरना संगीत का मुख्य लक्ष्य है। संतुलित जीवन व मस्तिष्क के लिए दोनों आवश्यक हैं ।नाद ब्रह्म की साधना आत्मा से जुड़ी है, आत्मा परमात्मा का अंश है। उस परम की अनुभूति कर आनन्द प्राप्त करना ही संगीत का लक्ष्य है। यह आनन्द तभी प्राप्त होगा जब आत्मा यह होगी | अष्टांग योग साधना आत्मा को परिभाजित कर विशुद्ध बनाती है।

वैदिक काल से ही भारत भूमि में योग व संगीत बहुत महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया गया है। परब्रह्म से एकाकार करने के लिए साधन रूप में योग व संगीत की प्रतिष्ठा मानी गयी है।

सामान्यतः संसार के संगीत को कला के में रुप ही पहचाना तथा स्वीकार किया, किन्तु भारत ने इसे कला के अतिरिक्त 'योग' के रूप में भी देखा है। संगीत तथा योग के सम्बन्ध को आध्यात्मिक व वैज्ञानिक रूप से भारत में ही नहीं अपितु विश्वस्तर पर भी स्वीकार किया गया है। संगीत व योग दोनों ने विधाओं में ईश्वर

ISBN: 978-81-955611-0-0

से साक्षात्कार कराने की असीम शक्ति निहित है, जिसका अनुभव हमारे प्राचीन मनीषियों ने किया। परम ब्रह्म में ध्यान केन्द्रित करना अति असाध्य है। इसके लिए चित वृत्तियों को वश में करना आवश्यक है। इस इस दृष्टि से योग दर्शन में 'अष्टांग योग' साधना पर बल दिया गया है। अष्टांग योग का प्रतिपादन योगशास्त्र के प्राचीनतम ग्रन्थ 'पातंजल योग सूत्र' में किया गया है। अध्यात्म में अष्टांग योग को साधन के रूप में स्वीकार किया गया है। यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान तथा समाधि-योग के आठ अंग बताए गए हैं।1 इन अष्टांगों का अभ्यास चित्त की एकाग्रता व इच्छाओं के दमन करने की शक्ति साधक में उत्पन्न होती है।

1. यम :

मानव शरीर को योग साधना के अनुकूल बनाने वाले साधनों को ही यम कहते हैं 120 योग सूत्र के अनुसार यम क्रमशः अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य तथा अपरिग्रह पांच प्रकार के हैं-

(क) अहिंसा : मन, वाणी और शरीर से किसी प्राणी को कभी किसी प्रकार का दुःख न देना अहिंसा है। परदोष दर्शन का सर्वथा त्याग इनमें विशेष है।

(ख)सत्य : इन्द्रिय और मन से प्रत्यक्ष देखकर, सुनकर, जैसा अनुभव करें, ठीक वैसा ही भाव प्रकट करने के लिए प्रिय व हितकर तथा दूसरे को उत्तेजित न करने वाले वचन बोले। कपट व छल रहित व्यवहार ही सत्य व्यवहार है।

(ग) अस्तेय : दूसरे के स्वत्व का अपहरण करना, छल से या अन्यायपूर्वक अपना लेना स्तेय है, अतः इन सबका अभाव ही अस्तेय है। (घ) ब्रह्मचर्य :

मन, वाणी व शरीर से होने वाले सब प्रकार के मैथुनों का सर्वथा परित्याग करना ।

(ङ) अपरिग्रह : अपने स्वार्थ के लिए ममतापूर्वक धन, सम्पत्ति और योग सामग्री का संग्रह करना ही परिग्रह है। अपरिग्रह है। अतः इसके अभाव का नाम ही अपरिग्रह है।

2. नियम :

जन्म के हेतु काम्य कर्म से जीव को निवृत्त करा के मोक्ष हेतु निष्काम कर्मों में

ISBN: 978-81-955611-0-0

उसकी प्रवृत्ति कराने वाले तपों को नियम कहते हैं। योग दर्शन में पांच नियमों का उल्लेख किया गया है : "शौचसंतोषतप्: स्वाध्यायेश्वर प्राणिधाननानि नियमाः। "2

(क) शौच : जल, मृत्तिकादि के द्वारा शरीर, वस्त्र और स्नान आदि से मल को दूर करना बाहर की शुद्धि है। जप, तप और शुद्ध विचारों के द्वारा मैत्री आदि की भावना से अन्तःकरण में स्थित राग-द्वेष आदि मलों का नाम करना भीतर की पवित्रता है।

(ख) संतोष : कर्त्तव्य कर्म का पालन करते हुए, उसका जो भी परिणाम हो तथा प्रारब्ध के अनुसार जो कुछ भी प्राप्त हो एवं जिस अवस्था और परिस्थिति में रहने का संयोग हो, उसी में संतुष्ट रहना तथा किसी प्रकार की कामना या तृष्णा न करना ही संतोष है।

(ग) तप : अपने वर्ण, आश्रम, परिस्थिति व योग्यता के अनुसार स्वधर्म का पालन करना तथा वह पालन करने में जो भी शारीरिक या मानसिक कष्ट प्राप्त हो उसे सहर्ष सहज करना ही तप है।

(घ) स्वाध्याय :जिससे अपने कर्त्तव्य व अकर्त्तव्य का बोध हो, ऐसे वेद, शास्त्र आदि का पठन-पाठन तथा ओंकार' आदि किसी भी मन्त्र का जाप करके अपने इष्ट का ध्यान करना ही 'स्वाध्याय' है। अपने जीवन का अध्ययन करना तथा अपने विवेक से अपने ही दोषों का निरूपण करना ही स्वाध्याय है।

(ङ) ईश्वर प्राणिधान : ईश्वर के प्रति समर्पित हो जाना ही 'ईश्वर प्राणिधान' हैं। उसके नाम, रूप, लीला, गुण आदि का श्रवण, कीर्तन व भजन करना, उससे अनन्य प्रेम करना आदि इसमें शामिल है।

3. आसन :

"स्थिरसुखमासनम्।"

निश्चल होकर सुखपूर्वक बैठने का नाम आसन है।

'योग-मार्तण्ड' नाम ग्रन्थ के अनुसार आसन संस्था में उतने ही हैं जितने कि जीव-जन्तु।उन सबका रहस्य भगवान शंकर ही जानते हैं।

ISBN: 978-81-955611-0-0

4. प्राणायाम :

श्वास को रोकने की योगविधि प्राणायाम कहलाती है। प्रारम्भ में हठयोग के विविध आसनों की सहायता से इसका अभ्यास किया जाता है। ये सारी विधियां इन्द्रियों को वश में करने तथा आत्म-साक्षात्कार की प्रगति के लिए संस्तुत की जाती है। इस विधि में शरीर के भीतर वायु को रोका जाता है जिससे वायु की दिशा की गति उलट सके। अपान वायु निम्नगामी(अधोमुखी) है और प्राण वायु ऊर्ध्वगामी है। प्राणायाम में योगी विपरीत दिशा में सांस लेने का तब तक अभ्यास करता है जब तक दोनों वायु उदासीन होकर सम अर्थात् पूरक नहीं हो जाती है। जब अपान वायु को प्राण वायु में अर्पित कर दिया जाता है तो उसे 'रेचक' कहते हैं। जब प्राण तथा अपान वायुओं को पूर्णतया रोक दिया जाता है तो इसे 'कुम्भक' योग कहते हैं। कुम्भक योग द्वारा मनुष्य आत्म-सिद्धि के लिए जीवन अवधि बढ़ा सकता है। 3

5. प्रत्याहार :

प्राणायाम के द्वारा इन्द्रियों को शुद्ध करने के पश्चात् इन्द्रियाँ की बाह्यवृत्ति को सब ओर से समेट कर मन के साथ विलीन करने का अभ्यास ही 'प्रत्याहार' है।

6. धारणा :

किसी एक निश्चित लक्ष्य में चित्त की वृत्ति को लगाना ही 'धारणा' है।

7. ध्यान :

योगसूत्र के अनुसार धारणा के देश में चित्तवृत्ति का अखण्डित प्रवाह तथा मन का निर्विषयी होना ध्यान कहलाता है। स्थूल ध्यान, ज्योति ध्यान तथा सूक्ष्म ध्यान- क्रमशः तीन प्रकार ध्यान के बताए गए हैं। किसी मूर्तिमान अभीष्ट देवता का ध्यान 'स्थूल ध्यान' कहलाता है। तेज रूप परमात्मा का ध्यान करना ज्योति ध्यान' कहलाता है तथा कुण्डलिनी शक्ति के दर्शन करने को 'सूक्ष्म ध्यान' कहते हैं।

8. समाधि :

जीवात्मा तथा परमात्मा की एकता के ज्ञान के उदय को ही समाधि कहते हैं। पातंजल योगसूत्र के अनुसार ध्यान करते-करते जब योगी का चित्त ध्येयाकार हो जाता है, ध्येयी तथा ध्याता का भेद मिट जाता है, तब उसे 'समाधि' कहते हैं।

ISBN: 978-81-955611-0-0

चित्त का सकाग्र अवस्था में परिणत होना ही 'समाधि' कहलाता है।

अष्टांग योग साधना आत्मा को परिभाजित कर विशुद्ध बनाती है। इसके द्वारा मानव के लिए ईश-प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त होता है और मनोविकारों से मुक्ति मिलती है। जिस प्रकार एक नर्तक किसी रस्सी पर चलता है तो उसे कितना शारीरिक-मानसिक संतुलन बनाना होता है। यदि वह जरा भी चूक जाए तो गिर सकता है, यह भी एक साधना है अर्थात् वह अपने आपको पूर्णतः साध लेता है तभी संतुलन बना पाता है। इसी प्रकार मानव भी जीवन में योग-साधना का मार्ग अपनाकर अपने आपको संतुलित कर अध्यात्म मार्ग की ओर बढ़ता है। अष्टांग योग साधना द्वारा मानव मनोविकारों को परिभाजित कर नैतिक मूल्यों के प्रति आस्थावान बनाता है, क्योंकि आत्मा की शुद्धि के लिए मनोविकारों की शुद्धता पहली सीढ़ी है। जब सुख-दुःख का अनुभव नहीं होता सिर्फ ईश्वर प्राप्ति की लगन रहती है, वही सच्ची अध्यात्मिकता का स्वरूप है। ज्ञान की सबसे ऊंची अवस्था को, जिसमें चित्त सर्वथा तत्त्वाकार हो जाता है उसे सहजावस्था कहते हैं। कस्तूरी मृग का बड़ा ही सुन्दर आख्यान है जिसमें सब प्रकार की आध्यात्मिक साधना का स्वरूप स्पष्ट हो जाता है। एक कस्तूरी मृग एक बार उत्तराखण्ड के पहाड़ों में विचरण कर रहा था सहसा उसे एक मनमोहक गंध का अनुभव हुआ। वह उस गंध से मुग्ध होकर उसका उद्गम स्थान पता लगाने के लिए हिमालय की कठोर सर्दी में भी इधर-उधर भटकने लगा। उसके मन में भय, शंका सभी समाप्त हो चुके थे। भागते-भागते एक चट्टान से फिसलकर बुरी तरह से घायल हो गया। प्राणों का त्याग करते हुए उसे ज्ञात हुआ कि वह जिस सुगन्ध के लिए इधर-उधर भटक रहा था, वह उसकी नाभि से आ रही है। वह क्षण उसके लिए सबसे अधिक सुखदायक था। उसी प्रकार साधक भी भगवद् प्राप्ति के लिए सभी प्रयत्न करता है; परन्तु 'स्व' के ज्ञान से अनभिज्ञ साधक अपने लक्ष्य की चरम् सिद्धि नहीं कर पाता। अतः आत्म अनुभूति, आत्म विश्लेषण, आत्म शुद्धि के पश्चात् ही परब्रह्म की प्राप्ति होती है।

नादब्रह्म की साधना आत्मा से जुड़ी है, आत्मा परमात्मा का अंश है। उस परम की अनुभूति कर आनन्द प्राप्त करना ही संगीत का लक्ष्य है। यह आनन्द तभी प्राप्त होगा जब आत्मा यह होगी | अष्टांग योग साधना आत्मा को परिभाजित कर

ISBN: 978-81-955611-0-0

विशुद्ध बनाती है। संगीत साधक के लिए 'अष्टांग योग' का ज्ञान अति आवश्यक है क्योंकि योग व संगीत उद्देश्य की दृष्टि से एक दूसरे के पूरक हैं। संगीत व योग ये दोनो विषय मुख्यतः क्रियात्मक है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से इन दोनों विषयों को श्वास नामक सेतु ने जोड़ रखा है। श्वास क्रिया को विशिष्ट दिशा में दीक्षित करना, यही संगीत व योग का प्रथम कर्तव्य है।संगीत का सम्बन्ध नाद से है और नाद का प्राणवहन से। जिस प्रकार प्राणायाम यानि प्राणों के आयाम से वित्त शान्त होता है, उसी प्रकार संगीत या सांगीतिक नाद से भी चित्त शान्त होता है।4

नाद योग, संगीतिक योग-क्रिया है। ओंकार-साधना के लिए नाभि से स्वर निकालना, कवाल-भाती के समान ही योग क्रिया है। योग का उद्देश्य एकाग्रता सिद्ध करना होता है, संगीत-साधना से भी एकाग्रता की प्राप्ति की जाती है। स्वरों की उपासना, रियाज़, शास्त्र पद्धति का अनुपालन करते हुए नाद वृक्ष की अराधना करके अन्तर्गत में गहराई तक उतरना संगीत का मुख्य लक्ष्य है।

संदर्भ सूची:

(1) पतंजलि योग-दर्शन , डॉ मृदुल कृति,प्रभात प्रकाशन दिल्ली।(2.27)(पृष्ठ-76)

(2) योग-दर्शन, हरिकृष्ण दास गोयन्दका,गीता प्रेस, गोरखपुर।(पृष्ठ-77)

(3) भगवद्गीता यथारूप, भक्ति वेदान्त स्वामी, भक्ति वेदान्त बुक ट्रस्ट,मुम्बई (पृष्ठ-211)

(4) संगीत एवं योग का वैज्ञानिक स्वरूप, ईवा शास्त्री व नेहा शर्मा, नवजीवन पब्लिकेशन, राजस्थान, भूमिका

ISBN: 978-81-955611-0-0